मुक्ताबाई द्वारा एक सच्चे साधक का मार्गदर्शन

भारत की एक प्राचीन कथा पर आधारित

प्रकाश के पर्व, दिवाली का समय था। मुक्ताबाई नामक एक बालिका किसी महत्त्वपूर्ण कार्य से अपने गाँव के बाज़ार जा रही थी। वह इस त्यौहार पर अपने परिवार के लिए एक मिठाई, पूरणपोली बनाने का सोच रही थी। उसके माता-पिता का स्वर्गवास हो चुका था और अब मुक्ताबाई अपने तीन बड़े भाइयों — निवृत्तिनाथ, ज्ञानेश्वर देव व सोपान देव के लिए यह विशेष व्यंजन स्वयं बनाना चाहती थी। चूँकि वह पहली बार पूरणपोलियाँ बनाने जा रही थी तो उन्हें सेंकने के लिए उसे मिट्टी का एक तवा खरीदना था।

भले ही, मुक्ताबाई, गाँव की अन्य बालिकाओं जैसी ही दिखाई देती थी किन्तु उसके पड़ोसी इस बात से अनजान थे कि वह अपने तीनों भाइयों के समान ही एक सिद्ध, एक आत्मज्ञानी थीं। सत्य की ज्ञाता यह किशोरी दिवाली के त्यौहार पर लोगों के चेहरों पर चमक रही मित्रता व सद्भावना की सराहना करते हुए अपने गाँव आलन्दी के रास्तों से मुस्कुराते हुए गुज़र रही थी। गाँव की गलियों में त्यौहार के लिए फल और मिठाइयाँ खरीदने आए लोगों की भीड़ थी। मार्ग में मिलने वाले सभी लोग मुक्ताबाई से हँसते हुए मिल रहे थे, जब तक कि उसे गाँव के एक प्रतिष्ठित ब्राह्मण, विसोबा चाटी न मिल गए।

गाँव के ये वयोवृद्ध व्यक्ति, भगवान के प्रति अपनी ललक को अभिव्यक्त करने के लिए कट्टर परम्पराओं का कठोरता से पालन करते थे। आलन्दी के दूसरे पुरोहित समाज की तरह ही विसोबा भी मुक्ताबाई और उनके भाइयों को नापसन्द करते थे क्योंकि उनके पिता विट्ठलपन्त ने युवावस्था में विवाह किया था किन्तु सुखी न होने के कारण, अपनी पत्नी का त्याग कर संन्यास ले लिया था। जब विट्ठलपन्त के गुरु को यह ज्ञात हुआ तो उन्होंने उन्हें गृहस्थ आश्रम में वापस लौट जाने का निर्देश दिया। उनकी पत्नी उन्हें पुनः देखकर प्रसन्न थी किन्तु गाँव के रूढ़िवादी ब्राह्मण खुश नहीं हुए। उन्हें लगता था कि किसी भी कारण से संन्यास धर्म को छोड़ना, धर्म के विरुद्ध जाना था और उनकी दृष्टि में युवक का यह कृत्य पूरे परिवार के लिए एक कलंक था।

जब विसोबा ने मुक्ताबाई को गाँव में स्वतन्त्रता से घूमते हुए देखा तो उन्होनें सोचा कि परम्परा के अनुसार इस किशोर बालिका को किसी वयस्क के साथ होना चाहिए। *यह परिवार हमेशा कुछ न कुछ ग़लत ही करता रहता है,* वे बड़बड़ाने लगे। *ठीक है मैं ही कुछ करता हूँ!* उन्होंने बालिका से पूछा, "तुम कहाँ जा रही हो?"

"मैं दिवाली पर पूरणपोली बनाने के लिए एक तवा खरीदने जा रही हूँ," मुक्ताबाई ने ब्राह्मण की ओर मुस्कुराकर देखा और उत्तर दिया।

विसोबा सन्तुष्ट नहीं हुए। "तुम्हारे जैसी किशोर बालिका को गाँव में अकेले नहीं घूमना चाहिए।"

"मुझे गाँव में अकेले घूमने में कोई परेशानी नहीं है," मुक्ताबाई ने कहा, "यहाँ सब मुझे पहचानते हैं। और मेरे भाइयों को पता है कि मैं कहाँ हूँ।"

विसोबा क्रोधित हो गए। "अपने से बड़ों को जवाब देती हो?

मुक्ताबाई के मन में विसोबा के लिए करुणा का भाव था। वो जानती थीं कि वे एक सच्चे साधक हैं। वो उन्हें इस तरीक़े से समझाना चाहती थीं कि वे अपनी धार्मिक असहिष्णुता को त्यागकर अपनी समझ को विकसित करें। इससे पहले कि बालिका कुछ कहती, विसोबा तेज़ी से आगे बढ़ गए। कुछ देर बाद, मुक्ताबाई भी फिर से कुम्हार की दुकान की ओर चल दीं। वहाँ पहुँचने पर उन्होंने विसोबा को दुकान से बाहर जाते हुए देख लिया। और वे वहाँ क्यों आए थे? वे शीघ्र ही यह भाँप गईं।

कुम्हार ने उनसे कहा कि वह उन्हें तवा नहीं बेच सकता। वह धीरज के साथ उसके बहाने सुनती रहीं — उसे तवों को बेचने का एक बड़ा आर्डर मिला है, उसकी पत्नी को एक और तवे की आवश्यकता है, वह बच्चों को कुछ भी नहीं बेच सकता। क्या पता वह घर जाते-जाते रास्ते में ही तवा तोड़ डाले तो!

मुक्ताबाई समझ गईं कि कुम्हार के मना करने का कारण, विसोबा हैं। प्रभावशाली ब्राह्मण ने अवश्य ही दुकानदार को धमकाया होगा जिससे कि वह डर के कारण उन्हें तवा नहीं बेच रहा है। यह जानते हुए कि वह इस समय और कुछ नहीं कर सकतीं, मुक्ताबाई घर वापस लौट आईं और अपने भाइयों की प्रतीक्षा करने लगीं।

उनके मंझले भाई ज्ञानेश्वर, सबसे पहले घर आए। उन्होंने मुक्ताबाई को घर के द्वार पर बैठे पाया। उन्होंने तवा खरीदने जाने की अपनी कहानी उन्हें सुनाई। उन्होंने कहा, "विसोबा को लगा कि कुम्हार को तवा

बेचने से मना करने से मुझे तवा नहीं मिलेगा और बिना तवे के मैं दिवाली पर पूरणपोली नहीं बना सकूँगी।"

जब मुक्ताबाई यह बता रही थीं तब विसोबा, बच्चों के घर की खिड़की के पास आए। सम्भवतः उन्हें लगा होगा कि उन्होंने कुछ अधिक ही कर दिया है . . . या शायद वे यह देखना चाहते थे कि बिना नए तवे के बच्चे क्या करते हैं। जो भी रहा हो, उन्होंने जो देखा उससे उनका जीवन रूपान्तरित हो गया।

बालिका और उनका भाई दोनों पूरी तरह से यह जानते थे कि ब्राह्मण उन्हें देख रहा है और वे उसे नई समझ प्राप्त कराने में मदद करने के लिए मौन रूप से सहमत हो गए।

फिर ज्ञानेश्वर बोले, "लेकिन मुक्ता! तुम्हें पूरणपोली बनाने के लिए तवे की क्या आवश्यकता है? तुम मेरी पीठ पर ही पूरणपोलियाँ बना सकती हो!"

उनकी पीठ पर पूरणपोली पकाना! विसोबा आश्चर्यचकित होकर देखने लगे, ज्ञानेश्वर अपनी कोहनियों और घुटनों के बल झुक गए और बिना हिले-डुले इसी अवस्था में खड़े रहे। मुक्ताबाई उनकी पीठ पर आटे की गोल रोटियाँ डालने लगीं। गर्मी के कारण रोटियाँ सिंकने लगीं। पलटने पर वे सुनहरे भूरे रंग की हो गईं। कुछ ही देर में मुक्ताबाई के पास कुरकुरी, खस्ता, गरम पूरनपोलियों का डेर लग गया।

विसोबा जानते थे कि उन्होंने एक दिव्य चमत्कार देखा है और ये भी कि यह ज्ञानेश्वर महाराज की लीला है। उनके प्रति ब्राह्मण का दृष्टिकोण बदल गया। धार्मिक पूर्वाग्रहों से मुक्त, अब वे देख रहे थे कि ज्ञानेश्वर महाराज की मुस्कान में प्रज्ञान व करुणा थी। अब विसोबा को यह समझ आया कि ज्ञानेश्वर महाराज अवश्य ही सिद्ध हैं। विसोबा स्वयं आत्मज्ञान की यह अवस्था प्राप्त करने का वर्षों से प्रयत्न कर रहे थे परन्तु उन्हें इसमें सफलता नहीं मिल रही थी। ब्राह्मण ने सोचा कि *यह युवक अपने पूरे जीवन इसी गाँव में रहा है जिसमें मैं रह रहा हूँ। वर्षों तक मैं उनकी महानता से अनजान रहा।*

मुक्ताबाई ने रोटी सेंकते समय विसोबा को आश्चर्य से चौंकते हुए सुना था और अब उन्होंने उन्हें खिड़की में से आवाज़ दी। "विसोबा, क्या वहाँ आप हैं? मेरी पूरणपोलियाँ बन गईं हैं। क्या आप अन्दर आकर एक पूरणपोली खाना चाहेंगे?"

घर के अन्दर आने वाले विसोबा पूर्णतः रूपान्तरित हो चुके थे। उनके हाथ नमस्कार की मुद्रा में जुड़े थे, उन्होंने ज्ञानेश्वर महाराज से कहा, "मैं समझ गया हूँ कि मैं आपसे बहुत कुछ सीख सकता हूँ। कृपया मुझे अपना शिष्य स्वीकार करें।"

ब्राह्मण ने मुक्ताबाई की ओर तो देखा तक नहीं, जबकि उसी ने उन्हें अन्दर आने का निमन्त्रण दिया था। ज्ञानेश्वर महाराज मुस्कुराए और एक सिद्ध, आत्मज्ञानी महात्मा की पूर्ण करुणा के साथ वे अपनी छोटी बहन की ओर देखकर ब्राह्मण से बोले, "आप इनके शिष्य बन सकते हैं।"

विसोबा का मुँह खुला-का-खुला रह गया। यह छोटी-सी बच्ची! उनकी गुरु होगी! किन्तु जब उन्होंने उनकी प्रज्ञान व दयालुता से भरी आँखों में देखा तो उन्हें उनमें आत्मज्ञान की चमक दिखी। वे विद्वान बुजुर्ग समझ गए कि बालिका होने पर भी मुक्ताबाई एक आत्मज्ञानी सिद्ध हैं और उनका हृदय उनके प्रति भक्ति भाव से भर गया।

ब्राह्मण ने आदरपूर्वक उसी किशोर बालिका को प्रणाम किया जिसे कुछ देर पहले उन्होंने गाँव की गलियों में डाँटा था। वे बोले, "आज सुबह के अपने व्यवहार के लिए मैं शर्मिन्दा हूँ। कृपया मुझे क्षमा करें और मुझे अपने विनम्र शिष्य के रूप में स्वीकार करें।"

उनकी ललक की गहराई को पहचानकर, मुक्ताबाई ने कृपापूर्वक सिर हिलाया। समय के साथ उनकी कृपा व उनके मार्गदर्शन पर चलकर विसोबा को भी आत्मज्ञान प्राप्त हुआ और वे भी अन्य महान सन्तों के गुरु बने।

आज ही के दिन, विसोबा इस परिवार के साथ दिवाली की दावत में शामिल हुए थे — और पूरणपोलियों का सबसे ज़्यादा आनन्द उन्होंने ही उठाया था!

रचना कैरॉन द्वारा पुनर्कथन

चित्रण : लुसील्डा दासर्डो कूपर

© २०१८ एस. वाय. डी. ए. फ़ाउन्डेशन®। सर्वाधिकार सुरक्षित।